असम में वैष्णव धर्म:

भारत में 13 वीं व 14 वीं सदी के दौरान ऐसी शक्तियों का जाल वद्यमान था जिन्होंने हिन्दुत्व के नए आयामों के उत्थान को प्रेरित कया। ऐसे ही एक आयाम का उदय भक्ति के उदारवादी सद्धान्त पर हुआ जिसने हिन्दुत्व के दर्शन का जटिल संस्कृत परंपरा से सरल समझने योग्य लोकभाषा में सरलीकरण कर दिया। यह एक प्रगतिशील व लोकतांत्रिक आंदोलन था जिसने देवत्व की एकता पर बल दिया, जो अत्य धक अनुष्ठान वाद के खलाफ खड़ा हुआ, अ वरल भक्ति पर आधारित वश्वास का प्रसार कया व जातीय पूर्वाग्रहों के खलाफ संघर्ष कया तथा मानव की समानता पर ज़ोर दिया। संस्कृत पुराणों के सु वचारों को क्षेत्रीय भाषा में लोगों तक पहुंचाने के लए व भन्न प्रान्तों में कई महान संतों का उदय हुआ। इन संतों में इलाहाबाद के एक ब्राह्मण, रमानन्द सर्वा धक प्रभावशाली व्यक्ति थे जिनका तत्कालीन समय में अपने क्षेत्र में प्रथम स्थान था (1400-1470ई0)। वे राम के पूजक थे और उन्होनें अपने सद्धांतों का प्रसार हिन्दी भाषा में कया। कबीर (1440-1470ई0) उनके प्रमुख शष्यों में से एक थे। आंदोलन के दूसरे प्रमुख अगुवाकर वल्लभचार्य (1479-1531), तेलगू देश के एक ब्राह्मण थे। उन्होनें कृष्ण की उपासना की व द क्षण में अपने सद्धांतों का प्रसार कया। महाराष्ट्र में भक्ति के धर्म का प्रसार नामदेव (1400-143ई0) ने कया जो जाति से दर्जी थे। बंगाल में नादिया के एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने वाले प्रख्यात संत चैतन्य (1485-1533ई0) का उदय हुआ। असम में कई प्रतिभाओं के धनी संत शंकरदेव (1449-1569ई0) का उदय हुआ जो जाति से एक कायस्थ थे तथा जिन्होनें आने वाली सदियों के लए राज्य के लोगों के धा र्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक व शै क्षक जीवन को तराशने का कार्य कया। उनके उदय के समय असम की राजनीतिक स्थिति कई स्वतंत्र सद्धांतों का समूह थी। चूतया लोग देश के अ धकांश पूर्वी भाग पर शासन करते थे जब क द क्षण पूर्वी भाग कछारी शासकों के अधीन था। चूतियाओं के पश्चिमी व कचारियों के द क्षण में भुइयाँ गोत्र प्रभुत्व में था। सुदूर द क्षण में कमाता गोत्र स्थित था, जो कोच राजाओं के प्रभुत्व के समय कोच बिहार के नाम से जाना गया। शेष ब्रह्मपुत्र घाटी अहोम राजाओं द्वारा शा सत थी। इस प्रकार संघर्षशील राजनीतिक शक्तियों ने असम के लोगों को एक दूसरे से अलग करने का कार्य कया। फर भी असम व भन्न प्रजातियों, जनजातियों, वश्वासों और संस्कृतियों के लए एक खुशहाल घर था और इन भन्न-भन्न लोगों की सामाजिक संस्थाएं प्रच लत हिन्दू धर्म का हिस्सा थीं तथा तांत्रिक व्यवस्था का निर्माण करती थीं। लंबे गूढ कर्मकांड, जादू, मंत्र, जादू-टोना और बाली तांत्रिक व्यवस्था का

हिस्सा थे जो शंकरदेव से पूर्व सदियों से प्रचलन में थे। ऐसे राजनीतिक वभाजन व धा र्मक क्षरण के समय शंकरदेव एक जोड़क शक्ति व उम्मीद की एक करण के रूप में सामने आए। एक वकाशशील धर्म और समान राष्ट्रीय भाषा और साहित्य के साथ उन्होनें असम की राजनैतिक, सांस्कृतिक, धा र्मक और भाषाई उन्नति हेतु मार्ग प्रशस्त कया। इन राज्यों के कुछ राजाओं का संरक्षण प्राप्त होने के कारण नए वश्वासों को आगे बढ़ाने में मदद मली और मूलरूप से एक धा र्मक आंदोलन ने कई तरह से कला व साहित्य को प्रभा वत कया। कोच बिहार के शासकों ने वद्वानों को महाभारत व पुराण के अनुवाद हेतु संरक्षण प्रदान कया। अहोम राजाओं ने भी वशेष रूप से साहित्यिक गति व धयों को प्रोत्साहित कया और बुरंजिस नामक नए प्रकार के लेखन (गद्य) को संभव बनाया।

स्वामी ववेकानंद ने कहा था की वश्व के सभी धर्मों का आधार दर्शन, धा र्मक कथाएँ और कर्मकांड हैं। गुरु का जीवन धा र्मक कथाओं का हिस्सा है जिसके बिना धर्म के सार को नहीं समझा जा सकता।

महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव का जीवन:

महापुरुष शंकरदेव के जीवन का श्रोत उनकी मृत्यु के बाद उनके जीवन की प्रार्थना सेवाओं के कथनों की परम्परा है। ये प्रथा उनके शष्य माधवदेव द्वारा प्रारम्भ कया गया था। वैष्णव आंदोलन के परवर्ती गुरुओं ने शंकरदेव के जीवन और दर्शन के बारे में लखा, जिसे गुरुचरित कहा जाता है। जो भी उनके अनुयायियों द्वारा अनुसरण कया गया, अब चलन में आ चुका है और समय बीतने के साथ भारी मात्रा में जीवनपरक साहित्य का सृजन हुआ जिससे असम के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का चत्रण हुआ। जीवनियाँ समान्यतया अनुयायियों द्वारा लखी गईं। एक समूह के अगुवा दैत्यारी ठाकुर, भूषण द् वज, रमानन्द द् वज और बैकुंठ द् वज थे जिनहोने जीवनी को 'चरित पुठी' के रूप में लखा। बाद के काल में जीवनियाँ गुरु वर्णन (अनिरुद्ध दास), कथा गुरु चरित, भारद्वाजचरित, शंकरदेव चरित (बारपेटा से), सरु-स्वर्ग-खंड, बार स्वर्ग खंड (सार्वभौमा) के रूप में जानी गयी। इन जीवनियों में, जो श्रीमंत शंकरदेव से संबन्धित ति थयों और घटनाओं की प्रामा णकता को सद्ध करते हैं, वे महापुरुष के जीवन के परिप्रेक्ष्य में बहुत अ धक अंतर नहीं है। समान्यतया सभी जीवनियाँ शंकरदेव को वष्णु का अवतार मानती हैं। पश्चवर्ती जीवनीय कुछ सीमा तक इस परिप्रेक्ष्य में पूर्ववर्ती समूहों से भन्न

हैं क दूसरा समूह शंकरदेव को अलौ कक शक्तियों से जोड़ता है और चमत्कारी घटनाओं का वर्णन करता है। मत भन्नता के सूक्ष्म मुद्दे जौसे शंकरदेव बंगाल के श्री चैतन्य से मले या नहीं, मानवीय वश्वासों व लेखक के गुरु के प्रति प्रेम का प्रकटीकरण मात्र है।

वंशावली:

शंकरदेव के प वत्र वंश संबंधी अनुसंधान व उसको ल पबद्ध करने का कार्य असम के एक मूर्धन्य साहित्यकार व इतिहासकर डॉ. महेश्वर नेवोग द्वारा कया गया है। उन्होनें परिवार की उत्पत्ति को कई पीढ़ियों के अवतारों से जोड़ा और राजा दुर्लभ नारायण (जिसने 13 वीं सदी के दौरान प शम में करतोया नदी व पूर्व में बोर नदी के बीच स्थित राज्य पर शासन कया) के समय कामतापुर (वर्तमान में कोच बिहार) में पैदा हुए और बसे तथा अंततः चंडीबर के रूप में जाना गया। राजा दुर्लभनरायन सात कायस्थ परिवारों (चंडीबर सहित) और सात ब्राह्मण परिवारों को कन्नौज (गौर) से लेकर आया। बाद में वे कामरूप में बस गए जहां चांदीबार को शरोम ण(मु खया) भुइयाँ बना दिया गया। भुइयाँ भूस्वा मयों को दी जाने वाली एक उपा ध है जो देश के दूसरे भागों में भी प्रच लत थी। यह वंश बारो भुइयाँ भी कहा जाता है (आवश्यक रूप से बारह नहीं)। भूटान के भूटियाओं के उत्पीड़न के कारण चांदीबार अपने वंश के साथ ब्रह्मपुत्र के उत्तरी कनारे की ओर चले गए (असम के वर्तमान बोडोलैंड क्षेत्र के रौता और शगोरी में)। चांदीबार की मृत्यु के बाद उसका पुत्र राजधर (शंकरदेव के परदादा) मु खया बना जो बाद में अलीपुखुरी में बस गया। शंकरदेव का जन्म 1449 ई0 में वर्तमान नौगाव जिले में बोरदोवा के निकट अलीपुखुरी में शरोम ण भुइयाँ परिवार (पता कुसुंभर और माता सत्यसंधा) में हुआ। शादी के काफी समय बाद तक कुसुम्भर और सत्यसंधा के कोई संतान नहीं थी। शगोरी मंदिर में शव की पूजा अर्चना के बाद शंकरदेव का जन्म हुआ। बारों भुइयाँ असम में स्वतंत्र जमीदार हुआ करते थे। हिन्दू धर्म की वर्ण व्यवस्था के अनुसार, शंकरदेव क्षत्रिय वर्ण से संबन्धित थे, जिसे कायस्थ कहा जाता है। उनके पूर्वज वैदिक कर्मकांडों (पशु ब ल सहित) में वश्वास करते थे और मूलरूप से कई देवताओं की पूजा करते थे। सात वर्ष की अल्पायु में ही माता- पता के निधन के कारण बाल्यकाल में शंकरदेव की देखभाल उनके दादी खेरसुती द्वारा की गयी।

बाल्यकाल में वे एक उन्मुक्त बच्चे थे व अपने दोस्तों के साथ अत्य धक स्फूर्ति के साथ खेलते थे। कहा जाता है क वह तीव्र बहाव वाली ब्रह्मपुत्र को तैर कर जाते थे और पागल साँड़ों को नियंत्रित कर लेते थे। 12 वर्ष की आयु में उनकी दादी ने संस्कृत वद्वान महेंद्र कंडाली

द्वारा संचा लत स्कूल में भर्ती कराया। वद्यालयी जीवन के प्रारम्भ में ही उन्होनें अपना पहला छंद 'करतला-कमला' लखा। पूरी क वता 'ए' के अतिरिक्त अन्य कसी स्वर के इस्तेमाल के बिना लखी गयी। कशोरावस्था के दौरान वे तोल (वद्यालय) में ही रहते थे जहां उन्होनें संस्कृत व्याकरण और भारतीय शास्त्रों का अध्ययन कया। उनकी प्रथम रचना 'हरिश्चंद्र उपाख्यान' का सृजन उनके तोल निवास के दौरान ही हुआ। ऐसा वश्वास कया जाता है क तोल में रहने के दौरान दोपहर बाद क सूर्य की करणों से बचाने के लए शंकरदेव को एक ना गन द्वारा ढक लया जाता था।

शंकरदेव तोल में 1465 ईस्वी (4 वर्ष की शक्षा)तक रहे और महत्वपूर्ण हिंदु शास्त्रों में महारत हा सल की। स्कूली शक्षा के बाद वे भुइयाँ वंश के प्रमुख के रूप में अपनी जिम्मेदारियो को पूरा करने के लए अपने समाज से जुड़े। वे अपनी प्रजा और प्रसंशकों के बीच डेका गरी के नाम से जाने जाए थे। उन्होनें अपना निवास असम के नौगांव जिले में ही अलीपुखुरी से बोरदोवा स्थानांतरित कर लया। 20 वर्ष की आयु में उन्होनें सत्यवती से ववाह कया और ववाह के तीन वर्ष के बाद उनको 'मनु' नाम की एक पुत्री हुई। पुत्री के जन्म के नौ महीने के बाद उनकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया। शंकरदेव की पुत्री के ववाह (12-13 वर्ष की आयु) व नए वंशज हरि के भुइयाँ वंश के प्रमुख की गद्दी संभालने तक कुछ वर्षों के लए (लगभग 16 वर्ष) भुइयाँ वंश के प्रमुख बने रहे। ववाह के बाद अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों हरि व वंश से संबन्धित जिम्मेदारियां चाचा जयंत और माधव को सौपते हुए 1481 ईस्वी में 32 वर्ष की अवस्था में अपनी तीर्थ यात्रा प्रारम्भ की। उनके मत्रा व सहयोगी रामाराम व गुरु कंडाली सहित कुल 17 लोगों द्वारा उनका साथ दिया गया। 12 वर्ष की तीर्थ यात्रा के दौरान शंकरदेव ने भक्ति आंदोलन से संबन्धित प्रमुख स्थानों की यात्रा की। उन्होनें भक्ति आंदोलन के व भन्न केन्द्रों के दर्शन कए जिनमें उत्तर भारत के पुरी, गया, अयोध्या, सीताकुंड, वृन्दावन, मथुरा, बद्रीनाथ या बद्रिकाश्रम1; पश्चिम में द्वारिका व द क्षण के रामेश्वरम आदि स्थान शा मल थे। वे पुरी के जगन्नाथ मंदिर में लंबे समय तक रुके जहां उनकी मुलाक़ात देश भर के व भन्न वद्वानों से हुई। ज्ञान व शास्त्रो के पुरी में आदान-प्रदान ने असम में नव-वैष्णव वाद की दार्शनिक नीव रखने में महत्वपूर्ण भू मका निभाई। परिवार के पुनः बोरदोवा से अलीपुखुरी स्थानांतरित हो जाने के कारण उन्हे तीर्थयात्रा से लौटने के बाद अलीपुखुरी जाना पड़ा।

बड़ों के मनाने पर शंकरदेव तीर्थयात्रा से लौटे और भुइयाँ वंश का आं शक नेत्रत्व (सौ परिवारों की ज़िम्मेदारी-गोमष्ठा) ग्रहण कया वह भी उन्होनें हरी को स्थानांतरित कर दिया। अपनी दादी के कहने पर उन्होनें **54** वर्ष की अवस्था में का लंदी से ववाह कया। इस ववाह से उनके तीन पुत्र हुए। का लंदी **142** वर्ष तक जी वत रही। उन्होनें बोरदोवा लौटकर **1498** ईस्वी में अपने पैतृक घर के स्थान पर एक प्रार्थनाघर(देवगृह) का निर्माण कराया, जहा वे लोगो से मल सकते थे,लोगो से धा र्मक मामलों पर चर्चा व प्रार्थना कर सकते थे तथा भक्ति आंदोलन के तत्वों का प्रचार-प्रसार कर सकते थे। यह देवगृह नामघर नहीं कहा जाता था जैसा की इसे बाद में कहा गया। *(नामघर के वस्त्रत ववरण के लए सत्र सेक्शन देखें।)*

एक शरण नाम धर्म की नींव उस समय डाली गयी जब संस्कृत के वद्वान जगदीश मश्रा तिरहुत (बिहार के म थला) से पुरी के जगन्नाथ मंदिर से होते हुए आए और बोरदोवा में शंकरदेव से मुलाक़ात की जहां वे श्रीधरा स्वामी की 'भावार्थ-दी पक' के साथ 'भागवत पुराण' की प्रति लेकर आए और शंकरदेव को श्रीमत भागवत पुराण सुनाई। दात्यारी ठाकुर ने लखा है क: शंकरदेव ने जगदीश मश्रा के वाचन को ध्यानपूर्वक सुना और माना क भागवत पुराण के समानान्तर कोई अन्य शास्त्र नहीं है और वास्त वक धर्म के नाम पर कृष्ण को ईश्वर के रूप में व एकंठिका व शरण व सत्संग को वश्वास के अ भन्न अंग के रूप में मान्यता दी। शंकरदेव पहले ही तीर्थयात्रा के बाद भक्ति आंदोलन का हिस्सा बन चुके थे। उन्होनें 'भक्ति प्रदीप' व 'रुक्मिणी हरण' लखी और 'कीर्तन घोषा की भी रचना प्रारम्भ की। इस प्रकार शंकरदेव के नेत्रत्व में 'एक शरण नाम धर्म' फलने फूलने लगा।

पं डत जगदीश मश्रा भागवत पुराण वाचन के एक वर्ष पश्चात स्वर्गवासी हो गए। भागवत पुराण और इसकी टीका 'भावार्थ दी पका' के आधार पर शंकरदेव ने ' सन्हायात्रा' नामक नृत्य नाट्य की रचना की और स्वयं वाद्य यंत्रों को बजाया। भागवत पुराण को मान्यता और ' सन्हायात्रा' की रचना असम के लोगो के बीच वैष्णव दर्शन के प्रसार की शुरुआत थी।

इस धर्म के कुछ प्रारम्भिक लोगों में से जयंता-दलाई की पत्नी, हरीराम (बाद में तुलसीराम) नाम का एक कुष्ठ रोगी, रामाराम, उनके सहयोगी और उनके गुरु महेंद्र कंडाली थे। इसी समय अनंत कोंडली नाम का एक संस्कृत वद्वान भी इनका शष्य बन गया।

1516 ईस्वी में कोच बिहार के राजा वश्व संह और कछारी राजा के बीच निरंतर संघर्ष के दबाव के कारण शंकरदेव को बोरदोवा छोडना पड़ा। ऐसी परिस्थियों में आध्यात्मिक वकास संभव नहीं था और इसी लए शंकरदेव और उनके सहयोगी, ब्रह्मपुत्र नदी को पार कर पहले शंगोरी में बसे और अंत में ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तरी कनारे पर स्थित रौता (असम का वर्तमान दरंग जिला) में बस गए। इस परिवर्तन के बाद बोरदोवा व अलीपुखुरी में भुइयाँ वंश का प्रभुत्व समाप्त हो गया। राजा वश्व संह के रौता की ओर बढ़ने के कारण वे रौता में भी लंबे समय तक नहीं रुक सके। तब शंकरदेव गंगमऊ(वर्तमान असम के सोनितपुर का बेहाली क्षेत्र) चले गए, जो अहोम राज्य का हिस्सा था। शंकरदेव गंगमऊ में 5 वर्ष तक रुके जहां उनके बड़े बेटे रामानन्द का जन्म हुआ। गंगमऊ में उन्होनें 'पत्नी प्रसाद' नाटक लखा। गंगमऊ में ही उन्होनें एक अन्य वैष्णव अनंत कोंडली के साथ भागवत पुराण का संस्कृत से साधारण असमीया भाषा में अनुवाद कया जिसे सामान्य लोग आसानी से समझ सकें। संस्कृत शास्त्रों का क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद, जिससे सामान्य व्यक्ति आसानी से इन्हे समझ सके, उस काल के वैष्णव आंदोलन द्वारा अपनाए गए महत्वपूर्ण तरीकों में से एक था।

वश्व संह की आक्रामकता जारी रही और वह अहोम राज्य तक पहुच गया जहा उसका सामना भुइयाँ वंश से हुआ। भुइयाँ अहोम वंश के लए लड़े जहां कोच राजा को हारा दिया गया। शंकरदेव और उनके सहयोगी कोच राजा के साथ संघर्ष और भक्ति के धा र्मक उत्साह को साथ-साथ बनाए रखने की स्थिति में नहीं थे। पूरा वंश फर से पूर्व की ओर चला गया और धुवाहाट नामक स्थान पर बस गया, जो वश्व के सबसे बड़े नदी द्वीप 'माजुली' (स्थान को बेलागुड़ी भी कहा जाता है) पर स्थित है। ये द्वीप ब्रह्मपुत्र के बीचोंबीच स्थित है। जिस प्रकार भगवान कृष्ण जरासंध के हमलों से बचने के लए समुद्र के बीच स्थित द्वारिका में बस गए, उसी प्रकार शंकरदेव ने धा र्मक प्रचार हेतु शांतिपूर्ण वातावरण के लए इस स्थान को चुना। धुवाहाट वर्तमान 'आहटगुड़ी' के निकट स्थित एक स्थान था जो वर्ष 1913 ईस्वी में ब्रह्मपुत्र द्वारा बहा ले गया। धुवाहाट में शंकरदेव ने भू म व धन के रूप में अहोम राजा से अपने वंश के लए शाही सहायता प्राप्त की। कुछ भुइयाँओं ने शाही उपा धयाँ और रोजगार प्राप्त कया। शंकरदेव के पौत्र हरी 'सै कया' हो गए और जयन्त के पौत्र और उनके चचेरे भाई 'जगतनंदा' ने रामाराय की उपा ध धारण की।

असम में नव वैष्णव वाद आंदोलन के लए अन्य महत्वपूर्ण घटना धुवाहाट नामक स्थान पर घटी जहा शंकरदेव अपने आध्यात्मिक उत्तरा धकारी माधवदेव से मले। माधवदेव देवी-देवताओं के सामने ब ल चढ़ाने सहित कर्म-काण्ड में वश्वास रखते थे (जिसे जफ़्ता कहा जाता था)। वे देवी के सामने बकरी की ब ल चढ़ाने के दौरान अपने साले रामदास से मले और रामदास, जो क हाल में ही वैष्णव धर्म में धर्मांतरित हुए थे, के साथ धा र्मक तर्क- वतर्क हुआ। रामदास पूर्व में गयापणी के नाम से जाना जाता था जिसने माधवदेव और शंकरदेव के सामने माधवदेव की बहन से ववाह कया। शंकरदेव के पास गया और लंबे वाद- ववाद के बाद एक-शरण की शक्ति व क्षमता को माना। यह घटना वष्णु के अवतार के साथ परमात्मा के मलन पर ज़ोर देने के लए 'मोनी-कंचन योग' के नाम से जानी जाती है। माधवदेव इस वश्वास की मजबूत स्थापना और वैष्णव वाद के प्रसार के पीछे मुख्य ताकत थे। शंकरदेव धुवहाट में **16** वर्षों तक रहे जहां कई महत्वपूर्ण अनुयायियों ने भक्ति आंदोलन के प्रसार में उनका साथ दिया। उन्होनें इस काल के दौरान 'कीर्तन घोषा' और 'बोर गीत' भी लखा। शाही संरक्षण में उनके सान्यिध्य में लोगो का आध्यात्मिक जीवन उत्कृष्ट होता चला गया जब तक क अहोम राजा से उनके संबंध तनावपूर्ण नहीं हुए।

एक-शरण नाम धर्म की लोक प्रयता और वैदिक कर्मकांडों और जनजातीय जीवन पद्धति के रूपान्तरण ने ब्राह्मण पुजारियों के कान खड़े कर दिये जिन्होने क्रोध व शत्रुतापूर्वक प्रति क्रया दी। शंकरदेव ने अपने ब्राह्मण वरो धयों से अपने एक संबंधी 'बुद्धा खान' के घर पर मलकर व जगन्नाथ की लकड़ी की मूर्ति की स्थापना की बात कर के शत्रुता को समाप्त करने का प्रयास कया। ले कन, पुजारी संतुष्ट नहीं हुए और अहोम राजा सुहंगमुहंग **(1497-1539)** से शकायत की जिसने शंकरदेव को उनके साथ तर्क- वतर्क के लए अपने दरबार में बुलाया। शंकरदेव राजा को यह समझाने में सफल हुए की वे धा र्मक वद्रोही या व्यवस्था के लए चुनौती नहीं हैं। उनके वरुद्ध आरोप छोड़ दिये गए। शत्रुता हमेशा के लए समाप्त हो गयी।

यद्य प भुइयाँ की असम में स्था पत स्थिति थी, संबंध धीरे-धीरे खराब होने लगे। उसी समय कोच राजा के साथ संबंध मधुर होने लगे। **1540** ईस्वी में कुछ समय के लए राजा सुकलेंगमूंग **(1539-1552)** के शासनकाल के दौरान एक शाही अ धकारी ने हाथी पकड़ने के अ भयान में क्षेत्र का दौरा कया। हरि मौजूद नहीं था और फर हाथी भुइयाँ द्वारा बनाए गए अवरोधक से बच निकला। अ धकारी ने कर्तव्य में इस लापरवाही पर कड़ा प्रतिरोध जताया और

हरि तथा माधवदेव को गरफ्तार कर लया। बाद में हरि को वर्तमान शवसागर के निकट राज्य की राजधानी, गढ़ गाँव में फासी दे दी गयी और माधवदेव को छोड़ दिया गया क्यों क वह शादीशुदा नहीं था। माधवदेव एक वर्ष बाद धुवाहाट लौटे। माधवदेव द्वारा घटना की जानकारी देने पर, धुवाहाट में प्रत्येक व्यक्ति को हरि की मृत्यु की बात पता चली। उनके दामाद का नुकसान, अध्यत्मिक आंदोलन के प्रति अहोम राजा की असहनशीलता का प्रतीक थी। शंकरदेव ने अपने अनुयायियों के साथ धुवाहाट छोड़ दिया और कोच राज्य चले गए। कोच का ब्रह्मपुत्र के उत्तरी कनारे से अहोम की ओर बढ़ना, वस्थापन के लए लाभकारी था। कोच सेना ने माजुली के निकट स्थित नारायणपुर में अपना पड़ाव डाला और शंकरदेव की उत्तर की ओर नदी पार करने में सहायता की। पराक्रमी राजा से टकराव टालने के लए वस्थापन आवश्यक था अन्यथा यह आध्यात्मिक वकास के लए वनाशकारी होता। शंकरदेव पूर्व में ही राजा नरनारायन के आध्यात्मिक झुकाव के बारे में सुन चुके थे जिसने उन्हे शांति के लए आक र्षत कया। वह पहले ही **95** वर्ष के हो चुके थे और माजुली में संघर्ष के बजाय कामरूप में भक्ति के प्रसार का निर्णय लया। शंकरदेव धुवाहाट छोड़ते समय जगन्नाथ की मूर्ति पेड़ पर लटकती छोड़ गए जिसे वर्षों पश्चात उनके शष्य बंशीगोपाल देव ने लाकर माजुली के देवरापार सत्र में स्था पत कया। वश्व संह जो भुइयाँ के प्रति शत्रुतापूर्ण भावना रखता था, की मृत्यु और नर नारायण **(1540)** के उदय के पश्चात, कोच -भुइयाँ संबंध कुछ और मधुर हो गए। शंकरदेव, माधवदेव और उनके अनुयायी **1540** ईस्वी के पश्च भाग में कोच राज्य के कपालबाड़ी पहुंचे और वहीं बस गए। उस समय वर्तमान के उत्तर बंगाल नौगाव जिले में स्थित कोलंग नदी के पश्चिम का सम्पूर्ण भाग कोच राज्य का हिस्सा था। ले कन कपालबाड़ी का पानी अत्य धक लवणीय था। माधवदेव की माँ सहित बहुत से सदस्य स्वर्गवासी हो गए। शंकरदेव और उनका समूह **1541** ईस्वी में सोनपाड़ा की ओर चला गया। सोनपोड़ा (कामरूप में बरपेटा के निकट) ने शंकरदेव ने भवनन्दा को शरण में शा मल कया। वह एक धनी व्यापारी था और कामरूप के अतिरिक्त गारो और भूटान की पहा ड़यों में अपने व्यवसायिक हित रखता था। शंकरदेव ने उसका नाम नारायण रखा जो नारायण ठाकुर या ठाकुर अता के नाम से जाना जाता था। नारायण ठाकुर बाद में बरपेटा के निकट जनिया में बस गया और कृ ष को अपना लया। शंकरदेव और उनके आद मयों को उसकी ओर से महत्वपूर्ण सहायता मली।

शंकरदेव सोनपोड़ा में केवल **6** माह या **1** वर्ष तक ही रुके तत्पश्चात वे नजदीक के ही क्षेत्र कुमारकु प या कुमारपाड़ा चले गए जहां एक वर्ष तक रुककर **97** वर्ष की आयु में **1546** ईस्वी में पतबौसी चले गए। सभी स्थान जहां काही भी वे रुके धा र्मक प्रवचन(बाद में सत्र कहा गया) की गद्दी बन गए जहां अपने शष्यों में से एक शरण नाम धर्म के नित्य प्रतिदिन के कर्म जारी रखने के लए छोड़ा। शंकरदेव कोच राज्य के पतबौसी में बस गए और चारीहाटी व नामघर की अन्य महत्वपूर्ण संरचनाओं के साथ साथ एक कीर्तनघर (प्रार्थनाघर) का निर्माण कया। कुछ लोग जिन्हें उन्होनें यहाँ पर दीक्षा दी है वे हैं- चक्रपा ण द् वज, और सार्वभौम भ ाचार्य, ब्राह्मण;गो वन,एक गारो; जयराम, एक भूटिया;मघई, एक जयंतिया; जैतराम,एक तपस्वी; और मुरारी, एक कोच। दामोदरदेव नाम का एक ब्राह्मण भी शंकरदेव द्वारा शा मल कया गया। दामोदर देव को शंकरदेव द्वारा ब्राह्मण शष्यों को शा मल करने का कार्य सौंपा गया। दामोदरदेव के लए पतबौसी में ही एक सत्र का निर्माण कया गया। दामोदरदेव से मलन असम के नववैष्णववाद आंदोलन के लए एक महत्वपूर्ण घटना थी। बाद में दामोदरदेव ब्रह्संगति का संस्थापक बन गया जो भगवान कृष्ण की मूर्ति पूजा में वश्वास रखता था। असमीया वद्वान लक्ष्मीकांत बेजबरुवा मानते थे की शंकरदेव ने भगवान कृष्ण की मूर्ति पूजा से संबन्धित कसी सत्र की कभी स्थापना नहीं की। बाद के वर्षों में कुछ परिवर्तन हुए जब उनके प्रमुख शष्यों में आपस में मनमुटाव हो गया। उन्होनें हमेशा ब्राह्मणो का सम्मान कया और हमेशा उन्हे उच्च स्टार पर रखा और कभी भी शरण में शा मल करने और दीक्षा देने से माना नहीं कया। यह वशेष मुद्दा नव वैष्णववाद आंदोलन के अंतर्गत असमीया समाज के वकास का बहुत बड़ा कारक बन गया।

पतबौसी से शंकरदेव **1550** ईस्वी में **117** शष्यों के बड़े दल के साथ द् वतीय तीर्थयात्रा के लए निकाल पड़े जिसमें माधवदेव, रामराय, रामाराम, ठाकुरआता और अन्य शा मल थे। ठाकुर अता को एक दिन की यात्रा के पश्चात वापस आना पड़ा। माधवदेव को रसद की सम्पूर्ण ज़िम्मेदारी उठानी पड़ी। इस तीर्थ यात्रा के दौरान शंकरदेव ने कबीर मठ और जगन्नाथपुरी के दर्शन कए। इस यात्रा, जो ठीक प्रकार से ल पबद्ध नहीं की गयी और शंकरदेव की चैतन्य महाप्रभु से मुलाक़ात पर जीवनीकारों के बीच मतभेद हैं। वे वृन्दावन का भी दर्शन करना चाहते थे ले कन उनकी पत्नी का लंदी एक बार वरण्डवन जाने पर उनकी वापसी को लेकर आशं कत थी। शंकरदेव पहले ही **97** वर्ष के थे और माधवदेव पर निर्भर थे। इस लए वे वृन्दावन नहीं गए।

शंकरदेव और उनका दल **6** माह के अंदर पतबौसी लौट आया। उनकी तीर्थ यात्रा के पूर्व ही कोच सेना के सेनापति और कोच राजा नारायण के भाई शलाराय **(**शुक्लोधवाज**)** ने शंकरदेव के चचेरे भाई रामराय की पुत्री भुबनेश्वरी से ववाह कर लया था।

उनके तीर्थ यात्रा से लौटने के बाद रामराय और अन्य शष्य पुनः गया, काशी और वृन्दावन के दर्शन करना चाहते थे। शंकरदेव ने कुछ नहीं कहा ले कन एक बरगीत "नहीं नहीं रामाया बिने टाप कारक कोई की रचना की। बरगीत के बारे में जानने के बाद रामराय ने अपना वचार त्याग दिया और महसूस कया क तीर्थ यात्रा एक कठिन कार्य है; एक शरण भक्ति ही आन्तरिक शांति का वास्त वक मार्ग है।

पतबौसी में ठहराव लगभग **18** वर्ष का था जहा उनके आध्यात्मिक कार्य का बड़ा भाग पूर्ण कया गया। इस अव ध के दौरान इन्होने **17** शास्त्रों का स्थानीयकरण और संक्षेपण कया और 'कीर्तन घोषा' भी पूर्ण कया। उन्होनें भागवतपुराण के **5** भागों का असमीया क वता के रूप में अनुवाद भी कया। 'अनादि पाटन'; निमी नव सद्ध; 'संबाद'; और बा लचलन '; की रचना हुई।

कोच राज्य में भी शंकरदेव को पुजारी वर्ग की चुनौती का सामना करना पड़ा क्यो क एक-शरण नाम में मूर्ति पूजा की आवश्यकता व जटिल वैदिक कर्मकांडों को मानने से इंकार कर दिया जो की आय, समाज में असमानता और ब्राह्मण वर्ग द्वारा गरीब अ श क्षत लोगों के शोषण का श्रोत थे। बार-बार ऐसी शकायतें सुनकर क शंकरदेव नए धर्म के प्रसार द्वारा लोगों के मन को दू षत कर रहे हैं, द् वतीय तीर्थ यात्रा के तुरंत बाद कोच राजा नरनारायण ने शंकरदेव को गरफ्तार करने का आदेश दिया। शलाराय ने अपने आठ सैनिकों को बिना रुके यात्रा कर पटबौसी पहुँचने के आदेश के साथ भेजा। उन्हें राजा के आद मयों के पहुँचने के पूर्व ही शंकरदेव के युवराज के आदेश पर गरफ्तार करने के निर्देश दिये गए। राजा के आदमी शंकरदेव को गरफ़्तार नही कर सके क्यूंकी वो पहले ही युवराज शलाराय की गरफ्त में थे। शंकरदेव को सम्मान पूर्वक राजकुमार के गार्डेन पैलेस सुर क्षत लाया गया। तब शलाराय ने शंकरदेव को आलोचना से पूर्व अपनी बात रखने देने हेतु राजा से आग्रह कया। राजा ऐसा करने को तैयार हो गया। नरनारायण के दरबार में जैसे ही उसने संहासन की ओर कदम बढ़ाए, शंकरदेव ने कृष्ण की स्तुति में संस्कृत टोटका मंत्र जिसे अब तोताया कहा जाता है, गाया 'मधु दानव दारना देव वरम 'और जैसे ही वह बढ़ा, उन्होनें भोर गीत 'नारायण कहे भक्ति करूँ तेरा' गाया।

हिन्दू धर्म पर खुले वाद ववाद में शंकरदेव ने पुजारियों को हरा दिया। नरनारायण ने शंकरदेव के ज्ञान, संत की आभा और उदारता से काफी प्रभा वत हुआ और उन्हे बारपेटा क्षेत्र का 'गोमाष्टा नियुक्त कया। उन्हे कोच बिहार के निकट भेलाडंगा में सत्र की स्थापना के लए भू म आवंटित की गयी जिसे बाद में मधुपुर सत्र के नाम से जाना गया। नरनारायण ने शंकरदेव को आध्यात्मिक जीवन शैली और शक्षा का मुक्त प्रसार करने के लए इजाजत देने हेतु घोषणापत्र जारी कया। यहाँ तक की राजा ने शरण को ग्रहण करने और शंकरदेव का शष्य बनने की इच्छा व्यक्त की ले कन उन्होनें उसे शष्य बनाने से इस आधार पर मना कर दिया क राजा के लए धा र्मक व नैतिक मूल्यों का पालन करना संभव नहीं होगा।

यह महान योद्धा शलाराय ही था जिसने शंकरदेव को न केवल निश्चित मृत्यु से बचाया बल्कि यह उसके शाही संरक्षण का ही परिणाम था क शंकरदेव असम में एक जारन धर्म स्था पत करने व सांस्कृतिक पुनर्जागरण लाने में सफल रहे। शलाराय ने शंकरदेव व उनके अनुयायियों के पतबौसी में ठहरने के लए एक बगीचों का घर बनाया। शंकरदेव कोच बिहार और पतबौसी के बीच बस गए। अपने कोच बिहार प्रवास के दौरान शंकरदेव प्रायः राजकुमार शलाराय को वृन्दावन के युवा कृष्ण के बाल्यकाल के मनोरंजन से परिपूर्ण दिनो का वर्णन सुनाया करते थे। राजकुमार मंत्रमुग्ध था और भगवान के पछले दिनो का गहराई से अनुभव करने की इच्छा जताई इस लए शंकरदेव चत्रात्मक रूप में कपड़ों पर कथा छपवाने के लए तैयार हो गए।

उन्होनें वृन्दावन में व्यतीत कए गए श्रीकृष्ण के जीवन के आरं भक वर्षों को चालीस गज लंबे वस्त्र पर चत्रित करने के लए बरपेटा के निकट तांतिकुची के बुनकरों को लगाया। शंकरदेव ने चत्रित करने के लए डजाइन , अलग अलग रंग व धागे उपलब्ध कराये और स्वयं बुनाई का पर्यवेक्षण भी कया। इसे पूरा होने में लगभग एक वर्ष लगा और वषयानुरूप ही इसका नाम भी वृंदावनी वस्त्र रखा गया। इसे शलाराय व नरनारायण को दिखाया गया, दोनों ही इसके चत्रण से अ भभूत हुए। शंकरदेव ने कोच बेहार से एक मुसलमान दर्जी को भी लया, जो उनके साथ पतबौसी भी आया।

राजा ने अपने दरबार में शंकरदेव और पुजारियों के बीच धा र्मक प्रवचन व चर्चा करवाई। एक बार राजा नरनारायन ने अपने दरबारी क वयों से भगवत पुराण के समस्त बारह अध्यायों का सं क्षप्त रूपण करने को कहा। जब सारे पं डतों ने इतने अल्प समय में कर पाने में असमर्थता

जताई तो शंकरदेव ने इसे चुनौती के रूप में स्वीकार कया और सर्फ एक रात में ही इसे पूर्ण कया। जिसे 'गुणमाला पुथी' के नाम से जाना जाता है, जो भागवत का सं क्षप्त रूप है।

भागवत पुराण के **12** अध्याओं के मूल तत्वों को एक छोटी पुस्तिका में संकलीत करने के बाद उन्होनें इसे लकड़ी के छोटे बक्से में रखा। तब इसके ऊपर उन्होनें वृत्त के अंदर एक मुरझाए हुए हाथी हंगुल हेतल (पीला और लाल) को पेंट कया। उन्होनें इसे 'भुरुकात हाथी' कहा जिसका तात्पर्य है ऐसा हाथी जो नींबू के बर्तन में निचोड़ दिया गया हो। यह शास्त्र गुणमाला था। मूर्तियों की बजाय यह पुथी (असमीया भाषा में धा र्मक पुस्तकों को सम्मान के साथ पुथी कहा जाता है) प्रार्थनाघर, नामघर, के गर्भग्रह (मुख्य व पुराना) में रखा गया है और चैतन्य के रूप में पूजा की जाती है। कुछ सत्रों में भगवान कृष्ण की मूर्ति बाएँ हाथ की तरफ रखी जाती है।

शंकरदेव ने राजा नरनारायन की प्रशंसा में तीन आभार लेख (असमीया भाषा में भाटिमा कहा जाता है) लखे। शंकरदेव का नरनारायन व शलाराय के साथ जुड़ना असमीया पुनर्जागरण का स्वर्ण युग माना जाता है। उनके शाही संरक्षण में शंकरदेव व माधवदेव ने स्वतन्त्रता पूर्वक एक शरण धर्म का प्रचार कया। शंकरदेव **1568** ईस्वी में अपने महाप्रयाण तक **20** वर्ष से अ धक समय तक इस राज्य में रुके।

उन्होनें माधवदेव और ठाकुराता के साथ व्यवस्था बनाई और पतबौसी में उन्हें व भन्न निर्देश दिये और स्थान को अंतिम बार छोड़ दिया। उन्होनें मधुपुर सत्र में अपना घर स्था पत कया। **1568** ईस्वी में भेलाड़ंगा में अपने अंतिम पड़ाव में मानवता की सेवा को सम र्पत सर्वा धक घटना पूर्ण जीवन व्यतीत करने के बाद **120** वर्ष की उल्लेखनीय आयु में महापुरुष ने अपनी अंतिम सांस ली।

<u>शंकरदेव की शक्षाओं के प्रमुख बिन्दु:</u>

लोकतन्त्र के बीज, वशेष रूप से असम के धा र्मक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्र मे, पहली बार शंकरदेव द्वारा डाले गए। नव वैष्णववाद की शुद्ध स्वास्थ्यवर्धक वायु के साथ शंकरदेव ने लोगों के मस्तिष्क को शुद्ध कया और व्यक्तिगत जीवन को आत्मसम्मानपूर्ण व अर्थपूर्ण बनाया। शंकरदेव ने असम को एक धा र्मक चेहरा और एक प्रेमपूर्ण उदारवादी धर्म दिया, ऐसा धर्म जो कर्मकांडों, समारोहों और अंध वश्वासों, जो उस समय का लक्षण था, के भर से मुक्त था। यह

तथ्य रेखां कत करते हुए क धर्म व नैतिकता परस्पर जुड़े हुए हैं, शंकरदेव के लेखों ने धर्म के नैतिक पक्ष पर ज़ोर दिया। पुराणों और धर्म ग्रंथों से उपयुक्त उदाहरण लेकर उन्होनें सत्य,दया या कृपा, दान अहिंसा, क्षमा, अनसूया (ईर्ष्या की अनुपस्थिति), धृति (धैर्य), श्रद्धा और इंद्रियों पर नियंत्रण जैसे पुण्य कार्यों की व्याख्या की। उनकी शक्षाओं के अनुसार बातें, दुख, वनाश और गैर अध्यात्मिकता का प्रसार करती हैं वे निम्न ल खत है-:

काम(कामुक प्रसन्नता), क्रोध,लोभ,मोह,मन, मत्सर्या या असूया (ईर्ष्या)। इन नैतिक पुण्य कार्यों ने न केवल अच्छे लोगों का व्यवहार(सदाचार) निर्धारित कया बल्कि सामाजिक सौहार्द्र, मत्रता व मानव व्यवहार में नई खुशबू को जोड़ा।

शंकरदेव ने स्वयं को केवल भक्ति मार्ग के उपदेशों व नैतिक मूल्यों को कायम रखने तक सी मत नहीं रखा बल्कि अंध वश्वासों, भष्टाचार, अज्ञानता, छुआछूत, इंसान-इंसान में असमानता और दूसरी सामाजिक बुराइयों को दूर कर असम में नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की।यही नहीं पुनर्जनित असमी साहित्य,नाटक,क वता,गीत और संगीत दिया जिसने एक अलग वचारधारा का रूप ले लया और असमीया समुदाय को एकता के सूत्र में परोया।

गुरु ने छुआछूत के उन्मूलन और सभी जातियों और समुदायों के लए समान अ धकारों की स्थापना का प्रयास कया। गांधी जी के जीवन पर्यंत प्रयासों से स्वतंत्र भारत के सं वधान में जो बाते शा मल की गयी हैं, असम में **500** वर्ष पूर्व ही महापुरुष शंकरदेव ने प्रच लत कर दी थी। उन्होनें पूर्व के सामाजिक रूप से दबे कुचले समुदायों को भक्त व महन्ता बनाकर उच्च जातियों के स्तर तक उठाया। अपने उपयुक्त संदर्भों व अभेद्य तर्कों के आधार पर वे ब्राह्मणों व उच्च वर्गों द्वारा अपने उच्च सद्धांतों को मान्यता व स्वीकृति दिलाने में सफल रहे, जो क प्रारम्भ में इन सुधारों के वरोधी थे और इस प्रकार एक उदारवादी, लोकतान्त्रिक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की।

शंकरदेव ने मूलरूप से अपने भक्ति आंदोलन के माध्यम से यह संदेश दिया क ईश्वर की प्राप्ति केवल कुछ लोगों का एका धकार नहीं है बल्कि यह उन सभी की पहुँच में है जो इसके लए प्रयास करते हैं। शंकरदेव द्वारा असम को दी गयी सर्वा धक महत्वपूर्ण संस्था,नामघर आज भी असम में लोकतान्त्रिक मूल्यों पर चल रही है। ये सभी ग्रामीणों की आवाज है और सभी का प्रबंधन में हिस्सा है। इसके दरवाजे न सर्फ सभी के लए खुले हैं बल्कि यह सभी ग्रामीणों को,

चाहे वे कसी भी जाति या प्रजाति के हो, इसकी सांस्कृतिक गति व धयों में भाग लेने की छूट है जो जीवन को शानदार व सुंदर बनाता है। बिना अन्य बातों का संज्ञान लए सभी लोगों की व्यक्तिगत क्षमता व प्रतिभा को मान्यता देना नामघर की सामान्य प्र क्रया है। एक व्यक्ति को उसके सामाजिक स्तर के कारण नहीं बल्कि संबन्धित क्षेत्र में उपलब्धियों के कारण अं कया नाटक में सूत्रधार अथवा सामूहिक संगीत में ज्ञान व बयान में वरीयता दी जाती है।

शास्त्रीय शक्षा की सीमाओं को तोड़ना और इसके साहित्य को अ श क्षत लोगों तक पहुंचाना, शंकरदेव का लोकतन्त्र की दिशा में दूरगामी योगदान था। संस्कृत भाषा के अच्छे व शानदार सारग र्भत वचार का आख्यानों, काव्य और अं कया नाटकों के माध्यम से अनावरण कया गया जिससे आम आदमी इनकी पहुँच में आ सके। आधुनिक सनेमा व दृश्य-श्रव्य आकर्षणों के बावजूद इन सांस्कृतिक मनोरंजनों का प्रभाव आज भी ग्रामीण लोगों के मस्तिष्क में वद्यमान है। यद्य प अपने अ धकांश लेखों में शंकरदेव ने वैदिक भाषा के बजाय आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग कया,ले कन इन लेखों में बोलचाल के रूखेपन का प्रभाव नहीं है। संचार के सरल माध्यम के साथ भारतीय वचार और साहित्य में लोगों को अपना सर्वोत्तम प्रदान कया। उनके बरगीत आज भी शास्त्रीय धुन में अ श क्षत लोगों द्वारा गाये जाते हैं व ग्रामीणों द्वारा अं कया-भावना नृत्य परंपरागत नाट्यशास्त्र शैली में प्रस्तुत कया जाता है। इसी लए लक्ष्मीकांत बेजबरुवा ने कहा, 'अ श क्षत असमीया लोग अज्ञानी नहीं हैं।'

शंकरदेव ग्रामीणों को नामघर में इक ा करते थे तथा उन्हें निरर्थक गपशप या अल्पका लक बातचीत का कोई मौका नहीं देते थे। अच्छे संगीत या दार्शनिक तथा धा र्मक चर्चाओं में भाग लेने के लए प्रोत्साहित करते थे। निःसन्देह इन सभी क्रयाओं ने सामाजिक मूल्यों व संस्कृति के स्तर को ऊंचा उठाया व सामान्य मस्तिष्क के बौ द्धक तथा कल्पनाशील क्षतिज को वृहत कर दिया।

एक देश के रूप में भारत का वचार पहले ही हिन्दू धर्मशास्त्रों की तरह आम लोगों के अध्यत्मिक मस्तिष्क में वद्यमान था। शंकरदेव चाहते थे क लोग इस प वत्र भारतवर्ष देश में जन्म लेने पर गर्व की अनुभूति करें क्यो क यह देश मनुष्य के नैतिक व आध्यात्मिक क्षमताओं के वकास के अपार अवसर उपलब्ध कराता है। उन्होनें बार-बार भारत के गौरवशाली और

आध्यात्मिक अनुभवों पर ज़ोर दिया। अपने कई छंदों में उन्होनें इस प्राचीन राष्ट्र भारतवर्ष की महान वरासत के बारे में बात की।

शंकरदेव ने कामरूप से कन्याकुमारी तक यात्रा करके असमीया लोगों के भौगो लक दायरे को बढ़ाया और भाषाई, सांस्कृतिक व धा र्मक आधार पर असम को शेष भारत के साथ जोड़ा। अपने मंत्रों व नाटकों में उन्होनें ब्रजवाली का प्रयोग कया जो राष्ट्रीय भाषा के रूप में पूरे उत्तर भारत में समझी जाती थी;सत्र व नामघर काफी सीमा तक द क्षण के मठों की व्यस्थाओं पर आधारित थे। उनकी कुछ साहित्यिक व कलात्मक अ भव्यक्तियाँ अलवार संतों,कबीर वद्यापति और भारत के अन्य संत क वयों की सलाह पर आधारित थीं। इस प्रकार शंकरदेव ने संकीर्णता व अलगाव को तोड़ा और भारतीय भावनाओ तथा भारत की एकता का मार्ग प्रशस्त कया।

शंकरदेव द्वारा अपनाए गए संचार के माध्यम:-

शंकरदेव द्वारा ग्रहण कए गए सम्प्रेषण के माध्यम को निम्न प्रकार से आक लत कया जा सकता है। अं कयानात या भावना जो क महाभारत व रामायण की कहानी पर आधारित है।गीत बरगीत, भाटिया व तोते से नि र्मत हैं। कीर्तन प्रार्थनाओं का संयोजन है उनका साथ संगीत, वाद्ययंत्रों, व हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत द्वारा दिया जाता है।

पुथी या आध्यात्मिक साहित्य संस्कृत शास्त्रों पर आधारित है।

डॉ. महेश नेवुग सहित वर्तमान के अ धकांश वद्वान पुथी के निर्माण को असमीया साहित्य का हिस्सा मानते हैं। निःसन्देह वैष्णव धर्म के लेख असमीया साहित्य के वकास व वृ द्ध में महत्वपूर्ण भू मका रखते हैं। ले कन इन रचनाओं का उद्देश्य साहित्यिक नहीं था। इनका मूल भाव आध्यात्मिक शक्षा है। समान्यतया इन रचनाओं की साहित्यिक खूबसूरती की प्रशंसा व वश्लेषण करते समय आध्यात्मिक भाव को छोड़ दिया जाता है। इस लए कलात्मक या साहित्यिक भाग के बजाय उनका अध्ययन व टिप्पणी आध्यात्मिक कारक के रूप में करना ज्यादा वांछित है।

शंकरदेव ने अपना भागवत पुराण का प्रतिपादन पूर्ण कया। शंकरदेव ने कीर्तन घोष की रचना की फर अंतिम भाग (उत्तर काण्ड) का अनुवाद कया और माधवदेव को पहले भाग का अनुवाद

करने हेतु निर्दे शत कया जो माधवदेव कंडाली द्वारा छोड़ दिये गए थे। उन्होनें **6** नाटक लखे; सन्हा यात्रा **(**उपलब्ध नहीं**),** रुक्मिणी हरण**,** पारिजात हरण**,** के लगोपाल**,** का लयादमन और राम वजय। पतबौसी में लखा गया एक दूसरा नाटक 'कंस वध' अप्राप्त है। पतबौसी में उन्होनें बरगीत**,** जिनकी संख्या **240** है**,**को कमला भक्त को दिया। ले कन दुर्भाग्यवश**,** भक्त का घर आग से धराशायी हो जाने के कारण अ धकांश बरगीत खो गए थे। पुथी की रचना और दूसरे माध्यम उनके जीवन के भन्न**-** भन्न समय कालों में भन्न**-** भन्न थे। अ धकांश पुथी भागवत पुराण के आधार पर लखे गए थे।

<u>काव्य:-</u>

हरिश्चंद्र-उपाख्यान **(**मार्कण्डेय पुराण**)**

रुक्मिणी-हरण-काव्य **(**भागवत तत्वों से म श्रत**,**श्रीधर स्वामी की टीका से प्रभा वत नहीं**)**

अजा मल-उपाख्यान

अमृत-मंथन

ब ल-चलन

कामाज्य या रासकृदा

गोपी-उद्धव-संबाद

कुरुक्षेत्र यात्रा

कृष्ण-प्रयाण-पांडव-निर्याण

कीर्तन घोषा

कथाओं पर आधारित कार्य **(**भक्ति सद्धान्त पर कार्य**)**

भक्ति-प्रदीप**(**गरुण-पुराण**)**

अनादि पातन

निमी-नव सद्ध-संबाद

गुणमाला

भक्ति रत्नाकर

अनुवाद:

भागवत खण्ड **VI** (आजमाइला-उपाख्यान भाग), खण्ड **VIII** (अमृत-मंथन भाग), खण्ड **I**, खण्ड **II**, खण्ड **III**, खण्ड **VII** (ब ल चलन भाग), खण्ड **x** (आदि भाग), खण्ड **XI**, खण्ड **XII**

उत्तराखंड रामायण पूरक से माधवदेव कंडाली की सप्त कांड रामायण

गीत:

बरगीत,**240** र चत ले कन अब **34** मौजूद

तोताया

भाटिमा: तीन प्रकार देव भाटिमा,नाट भाटिमा और राज भाटिमा

6 अं कया भावना में फैले **145** गीत हैं। अं कया नात में कुछ गीत बिना शास्त्रीय राग व ताल के हैं। जिन्हे कपाया या पयार कहा जाता है।

नाटक (अं कया नात)

(वप्र)-पत्नी-प्रसाद (अं कया नात)

का लय-दमन

के ल-गोपाल

रुक्मिणी-हरण

पारिजात-हरण

राम- वजय

तीन नात अप्राप्त हैं: सन्हा यात्रा, जन्म-जात्रा, कंस-बध

दृश्य कला:

सत्रीया नृत्य शंकरदेव द्वारा चलाया गया।

उनकी भाषा स्पष्ट है, उनके छंद परोये हुए हैं और उन्होनें जो कुछ भी लखा उसमें भक्ति को मलाया। उनकी सर्वोत्कृष्ट कृति कीर्तनघोषा है जो इतना लोक प्रय है क आज भी असम के बहुत से घरों में मल जाता है। कृष्ण के महिमामंडन के कथात्मक छंद हैं जो सामूहिक गायन के लए हैं। यह उत्तम भक्ति काव्य है जो जीवंत और सरल भाषा में लखा गया है। यह युवाओं को काव्यात्मक खूबसूरती से रूबरू कराता है और बड़े लोग इससे धा र्मक निर्देश व ज्ञान अर्जित करते हैं।

उनका भागवत का अनुवाद वास्तव में एक नव-सृजन (ट्रांस-सृजन) है क्यों क उन्होनें केवल शब्दों का अनुवाद नहीं कया बल्कि मुहावरों व मुखड़ों का भी कया। उन्होनें मूल पाठ को स्थानीय भू म व लोगों के अनुसार ढाला। इससे अ धक महत्वपूर्ण यह है क यह भक्ति के उद्देश्यों के लए था। जहां जरूरी था, मूल भाग छोड़ दिये गए या वस्तारित कए गए। शंकरदेव एकल नाटक अं कया नात के मूल स्रोत थे। उनकी 'सन्हा यात्रा' वश्व के पहले खुले थयेटर प्रदर्शनों में से एक मानी जाती है। नवीनता, जैसे मंच पर सूत्रधार क उपस्थिति, मुखौटे का प्रयोग आदि दूसरे प्रमुख नाट्य लेखनों में प्रयोग कए गए।

शंकरदेव के नव वैष्णववाद के दार्शनिक लक्षण:-

शंकरदेव का भक्ति आंदोलन श्रीमदभागवत गीता के एक शरण, श्री भागवतगीता के भक्ति के नौ रूप और सत्संग तथा पद्मपुराण के नाम पर आधारित है। श्री मद्भागवतपुराण से ब्रहमसूत्र के रूप में बद्रनारायण द्वारा प्रसारित वेदान्त स्कूल से दार्शनिक अनुकूलन है। व्यास के वेदांता स्कूल ने अद्वैत, व शष्टाद्वैत, द्वैत-अद्वैत तथा शुद्धाद्वैत पर आधारित कई वैष्णव पंथों का

मार्ग प्रशस्त कया। आधुनिक समय में माया पर आधारित अद्वैत के माध्यम से वेदान्त वचारधारा की स्थापना शंकरचार्य **(788-820** ईस्वी) द्वारा की गयी। वल्लभचार्य ने शुद्धाद्वैत की शुरुआत की यद्य प वह शंकरदेव से उम्र में छोटे थे। **12**वीं शताब्दी में रामानुजाचार्य ने व शष्टाद्वैतवाद की शुरुआत की। शंकरदेव शंकराचार्य के प्रचार-प्रसार से प्रभा वत नहीं थे यद्य प उन्होनें शंकराचार्य की शक्षाओं से श्लोकों को उद्धरित कया। शंकराचार्य के ब्रह्म ज्ञान को निर्वाण के एक मात्र मापदंड के रूप में कभी भी प्रोत्साहित नहीं कया।

बंगाल के चैतन्य महाप्रभु की तरह श्रीमंत शंकरदेव ने भी कभी वेदान्त वचारधारा पर कसी वशेष टीका का अनुसरण करने की आवश्यकता महसूस नहीं की। उनके लए श्रीमद भगवतगीता स्वयं में वेदान्त की एक महत्वपूर्ण टीका है। आज भी असम के लोग वेदान्त दर्शन पर कसी अन्य भाष्य/टीका की अव्यश्यकता महसूस नहीं करते हैं। श्रीमंत शंकरदेव द्वारा चलाया गया धर्म असमीया लोगों की आध्यात्मिक शांति और सामाजिक वकास के लए था।

असम में वैष्णव धर्म के शास्त्र **(**पुथी**)** आम लोगों के समझने के लए तैयार कए गए थे जहां दर्शन पर कसी वशेष चर्चा पर ज़ोर नहीं दिया जाता था। वेदान्त दर्शन ने अत्य धक वाद**-** ववाद व चर्चा को जन्म दिया। इस लए शंकरदेव ने ववादों को टालने के लए उपनिषद के आधार पर भक्ति का प्रसार कया। भक्ति आंदोलन पर वेदान्त सूत्र का प्रभाव अप्रत्यक्ष है। अ धकतम प्रभाव श्रीधर स्वामी की टीका**(**भावार्थ दी पका**)** का है। श्रीधर स्वामी पुरी के गोवर्धन मठ में महंत थे। चूं क श्रीधर स्वामी शंकराचार्य की वचारधारा से थे इस लए उनकी टीका अद्वैत है। यद्य प अद्वैत दर्शन की कठोरता भक्ति द्वारा समाप्त हो जाती है जब वे वष्णु के नर संह अवतार की पूजा करते हैं। इस भक्ति भावना का अद्वैत दर्शन के साथ मश्रण ही शंकरदेव के वैष्णववाद का आधार है। ठीक इसी समय शंकरदेव ने श्रीधर स्वामी की टीका का अनुसरण नहीं कया। सांख्य दर्शन और श्रीमदभागवतपुराण का राजयोग भक्तिधारा में ही परिल क्षत होता है। भागवत के तृतीय अध्याय के अनुवाद में श्रीमंत शंकरदेव ने क पल**(**अवतार क पल मुनि नहीं**)** के माध्यम से सांख्य दर्शन की व्याख्या की ले कन भक्ति के रूप मे,जो ईश्वर की प्रार्थना के लए इस्तेमाल होता है और क पल के सांख्य के वरुद्ध है तथा जो ईश्वर में वश्वास नहीं रखता है।

भागवत के **11**वें स्कन्द में पतंज ल के राजयोग का उल्लेख है जिसमें यम,नियम,**70** करोड़ से अ धक ना ड़याँ,**6** चक्र तथा कुंड लनी योग वर्जित हैं। शंकरदेव ने सम्पूर्ण ब्रांहंड की तुलना मृदभांडों से की।

"तुम्ही कार्य करणा समस्ते चराचर

सुवर्णा कुंडले येन नूही भन्नातर "

श्रीमंत शंकरदेव ने माया की व्याख्या ऐसे रूप में की है जो सत्य पर आवरण बनाता है तथा असत्य को सत्य की तरह प्रकट करता है। ब्रह्मांड व इसका सृजन,सभी जीवात्माएँ असत हैं, जो असन्त(अप वत्र) और असत्य हैं। यद्य प ये सत्य से उत्पन्न हुए हैं एवं वास्त वक सृजनात्मकता अथवा परमब्रह्म के कर्म के रूप में परिल क्षत होते हैं,वे असत हैं। ब्रह्म एवं जीवात्मा व अग्नि तथा चंगारी एक समान हैं। परंतु श्रीमंत शंकरदेव ने प्रसारित कया क यद्य प दार्शनिक स्तर पर ईश्वर और जीवात्मा में कोई अंतर नहीं है परंतु ईश्वर क रचना होने के कारण,कुछ सीमा तक जीवात्मा ईश्वर से अलग है और ईश्वर द्वारा शा सत है। इस प्रकार यहा शंकरदेव ने सी मत उद्देश्यों के लए निर्वाण के मार्ग में महत्वपूर्ण भक्ति के लए द्वैतवाद को स्वीकार कया।

"यद्य प तोमातो करी जीवा नोहे भन्न

टोथा पतों भइलों प्रभु तोमार अधीन।

शंकरदेव ने पुनः कुरुक्षेत्र काव्य में लखा:

ताजु अंकसा पुरुष तहर माया अंकसा!

सत्व, *रज, तम तिनी गुणा तन बंक्सा*

तर लवलेस्क्षे होवे सृष्टी स्थिति लाया।

त्रिगुण माया (सत्व,रजा,तम) अनंत पुरुष की शक्ति है और पुरुष से ही उत्पन्न होती है। यह शक्ति प्रकृति है और ईश्वर ने सृजन के कार्य में इस प्रकृति के साथ **24** तत्वों का निर्माण

कया। ब्रह्माण्ड इन्हीं **24** तत्वों से मलकर बना है जिसमें से मस्तिष्क ईश्वर का प्रतिबिंब है। जीवात्मा का मस्तिष्क के साथ मलन होता है और इस प्रकार यह प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होती है। पुण्य व कर्म की प्रतिबद्धताएं उनकी प्रवृत्तियों से उत्पन्न होती हैं। इससे जीवात्मा जन्म व मृत्यु के चक्र में फस जाती है। यह तब तक जारी रहता है जब तक की ईश्वर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को नष्ट नहीं कर देता। प्रलय के दौरान ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण वस्मृति, जीवात्मा का भौतिक शरीर नष्ट हो जाता है और दूसरा शरीर ईश्वर (हिरण्य गर्भा) के साथ अ क्रय अवस्था में रहता है। जीवन-मरण के चक्र से मुक्ति पाने के लए ,शंकराचार्य ने ब्रह्म ज्ञान के माध्यम से निर्वाण का उल्लेख कया। श्रीधर स्वामी ने भक्ति व ज्ञान को निर्वाण का मार्ग बताया। दूसरी ओर वैष्णव गुरुओं ने ज्ञान योग और वेदों के कर्मकाण्डों के ऊपर भक्ति की सर्वोच्चता को स्था पत करने का प्रयास कया। इसके लए श्रीमंत शंकरदेव ने भक्ति के नौ रूपों को प्रचारित कया जो हैं- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, बंदन, दाश्य, स खत्व और आत्मनिवेदन। भक्ति के नौ रूपों में से श्रवण व कीर्तन को सर्वा धक महत्वपूर्ण माना गया है इस लए शंकरदेव का धर्म 'नाम धर्म' के नाम से जाना जाता है। सुसुप्त माया जीवात्मा है। जब जीवात्मा जागेगी तो उसकी कोई अलग पहचान नहीं होगी। इस लए नरनारायण के अतिरिक्त अन्य ईश्वर की पूजा करना निर्जीव वस्तुओं की पूजा के समान है। श्रीमंत शंकरदेव ने श्रवण व कीर्तन के साथ भगवान कृष्ण की पूजा हेतु आग्रह कया। यद्य प अवतारवाद के लक्षणों को ध्यान में रखते हुए राम को भी नाम धर्म में शा मल कया जाता है जो राम-कृष्ण हैं।

शंकरदेव ने चार दुर्लभ पहलुओं को निर्वाण का आधार माना-क ल युग,मानव जीवन, ईश्वर का नाम और भारतवर्ष में जन्म।

यद्य प **15**वीं से **17**वीं सदी के दौरान सम्पूर्ण देश में नव वैष्णववाद में क्रांतिकारी परिवर्तन महसूस कए गए, शंकरदेव का नव वैष्णववाद देश के दूसरे भागों के ऐसे प्रवचनों से अछूता रहा। तांत्रिक क्रयों और **15**वीं सदी के असम में दूसरे धर्मो के नाम पर प्रच लत असमानता और लोगो के शोषण ने नए धर्म को प्रोत्साहित कया। देश के इस भाग को मुस्लिम आक्रमणों से कभी कोई खतरा नहीं था और इस प्रकार असम का भक्ति आंदोलन इस्लाम के प्रतिरोध का परिणाम नहीं है।

जाति व्यवस्था की अनुपस्थिति शंकरदेव के भक्ति आंदोलन की उल्लेखनीय वशेषता है। सत्र में पदा धकारियों की नियुक्ति में जाति मुद्दा नहीं है। नामाचार्य कसी भी जाति का हो सकता है। इसी तरह डेईरी (प्रसाद वतरण करने वाला व्यक्ति), अं कया नात के कलाकार, ज्ञान बयान जातीय पृष्ठभू म के बजाय धा र्मक उपलब्धियों और व्यक्ति की अ भवृत्ति के आधार पर चयनित कए जाते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण की आराधना भक्ति की उमंग का उच्चतम भाव है। ऐसे सामान्य अनुयाई जो केवल हरी नाम के श्रवण व कीर्तन में शा मल होते हैं उनके लए कर्मकाण्डों (वैदिक अनुष्ठान जैसे होम,योग आदि) का कोई स्थान नहीं है। जब क वैष्णव जो नियमबद्ध रूप से श्री कृष्ण (14 प्रसंगों के साथ) से जुड़े हैं , उनके लए कोई उल्लेख नहीं है। वास्त वक भक्तों के लए निर्वाण भी एक उद्देश्य नहीं है। एक वास्त वक भक्त अपनी पहचान को अक्षुण्ण रखते हुए भक्ति में लीन होना चाहता है।

दूसरे देवी देवताओं की पूजा,यहाँ तक क चढ़ावा चढ़ाना भी पूरी तरह से निषेध है। भक्तों द्वारा केवल उन वस्तुओं को लेने की उम्मीद की जाती है जो ईश्वर को दी जा सकती हैं।

श्रीमंत शंकरदेव द्वारा मूर्ति पूजा का उल्लेख नहीं कया गया है। धुवाहाट में जगन्नाथ की मूर्ति केवल वरोधी पुजारियों को संतुष्ट करने के लए रखी गयी। बाद में जब शंकरदेव ने दामोदरदेव को शा मल कया,कुछ सत्रों में भगवान श्री कृष्ण की मूर्ति की स्थापना प्रारम्भ हुई। शंकरदेव के अनुयायियों ने व भन्न कारणों से मूर्तियों की स्थापना प्रारम्भ की। शायद मूर्ति के उन्मूलन को प्रसारित करना शंकरदेव का उद्देश्य नहीं था। शंकरदेव के भक्ति उपदेशों में चरम वचारों के लए कोई स्थान नहीं है। उनके लए भक्ति और भक्त सत्संग के लए सर्वोच्च हैं। यद्य प यदि कोई निर्गुण भक्ति का स्तर प्राप्त कर लेता है, उसके लए मूर्ति पूजा का अनुसरण करना या न करना कोई मायने नहीं रखता। इस मामले में मूर्ति ऊर्जीकृत चैतन्य है और भक्त भी चैतन्य के स्तर पर होता है। यदि कोई चैतन्य के स्तर पर नहीं है, उससे मूर्ति पूजा का अनुसरण करने की उम्मीद नहीं की जाती। क्यो क उसके लए यह अनावश्यक जटिल कर्मकाण्ड हो जाता है जिसका कोई प्रभावशाली प्रभाव नहीं होता और उसके लए आध्यात्मिक प्रभाव व्याकुलता भरे हो सकते हैं तथा यह अन्य भक्तों के सम्मुख दिखावे का कारण होता है। इस प्रकार एक भक्त को भगवान

श्रीकृष्ण की मूर्ति पूजा से पहले सावधान रहना पड़ता है, निश्चित रूप से अन्य देवी देवताओं की मूर्ति पूजा के लए कोई स्थान नहीं है।

यह लेख श्री हेमंत बिजोय महंता, स चव, असोम सत्र महासभा नई दिल्ली द्वारा संक लत कया गया है।

सन्दर्भ सूची:

डॉ. बिरिंची कुमार बरुआ **(2009)** 'शंकरदेव: वैष्णव संत आफ असम', बीना पुस्तकालय गुवाहाटी।

श्री ज्योति प्रसाद राजखोवा **(2012),**'शंकरदेव: हिज लाइफ, प्री चंग एंड प्रेक्टिसेस'

फुटनोट:

1. हिन्दू शास्त्रों में बद्रीनाथ क्षेत्र को बदरी या बदरिकाश्रम कहा जाता है। यह वशेष रूप से वष्णु के द्वय रूप नर-नारायण के लए एक प वत्र स्थान है। इस लए महाभारत में कृष्ण ने अर्जुन से कहा है," बहुत से नर अपने पूर्व शरीर में नारायण के साथ बदरी में वर्षों तक कठोर तप करते है।" बद्रीनाथ की औसत ऊँचाई **3100** मीटर**(10170** फीट**)** है। बद्रीनाथ नवी शताब्दी में आदि शंकराचार्य द्वारा एक तीर्थ स्थल के रूप में पुनः स्था पत कया गया।

2. वैष्णव धर्म और असम में एकेश्वर धर्म के परिप्रेक्ष्य में अपनी कुछ रचनाओं **(**बरगीत व अं कयानात**)** में शंकरदेव द्वारा ब्रजवाली**(**ब्रजबुली नहीं**)** का साहित्यिक भाषा के रूप में प्रयोग कया गया। यद्य प वैष्णव धर्म के परिप्रेक्ष्य में उड़ीसा और बंगाल में भी समान भाषा का प्रयोग कया गया, असम में भाषा अलग थी क्यो क यह मै थली**(**ब्रजभाषा नहीं**)** पर आधारित थी जिसमें असमी व छिटपुट हिन्दी को जोड़ा गया। सामान्य तौर पर ब्रजवाली शब्दों व मुहावरों के प्रकटीकरण का तरीका स्थानीय **(**असमीया**)** था जब क संक्रामक रूप जो की असम के लोगों द्वारा आसानी से समझा जाता था, मै थली था ले कन इसमें भक्ति क वयों की पसंदीदा भाषा ब्रजभाषा, का रस था। ब्रजबूली मुहावरों का वकास उड़ीसा व बंगाल में भी हुआ। ले कन डॉ. सुकुमार सेन इं गत करते हैं क असमी ब्रजबुली का वकास म थला के साथ सीधे जुड़ाव के कारण हुआ **(**'ए हिस्ट्री आफ ब्रजबुली लट्रेचर, कलकत्ता**,1931)** इस कृत्रिम भाषा के लए

मै थली एक आधार थी जिसमें असमी व छिटपुट हिन्दी को जोड़ा गया। **(**नियोग **1980,** पृष्ठ **257)(1980)**। डॉ नेवुग **"**अर्ली हिस्ट्री आफ वैष्णव फेथ एण्ड मूवमेंट इन आसाम**"**। डेलही**:** मोतीलाल बनारसी दास।